अध्याय पाँच

संजीव के उपन्यासों में विस्थापन से उत्पन्न सामाजिक संकट

५.१ नारी समस्या

भारतीय धर्म व्यवस्था में नारी का स्थान दोयम दर्जे का है। इस दोयम नारी को सामंती अहं का हर समय भाजन बनना पड़ता है। आदिवासी समाज की नारी को कभी फुसलाकर तो कभी लालच और धौंस देकर व्यवस्था और धर्म के ठेकेदार शोषित करते हैं। नारी शोषण में जातीयता, धार्मिक अंध मान्यताएँ और पाखंड सहयोग देते हैं। मनु और तुलसी की परंपराएँ सनातनियों को नारी शोषण की खुली छूट देते हैं।

'किशनगढ़ की अहेरी' उपन्यास में सामंतशाही वर्ण और जाति व्यवस्था के चलते सर्वहारा समाज की नारी को प्रताड़ित होना पड़ता है। राधा के वैधव्य का फायदा उठाकर मामा ब्रह्मचारी उसका यौन शोषण करता है। राधा इसका विरोध करती है पर उसकी एक नहीं चलती। भरी दुपहरी में मामा लोभी कुत्ते की तरह रसोई घर में जाकर राधा पर टूट पड़ता है- "मामा! मामा! मामा कुछ बोलते नहीं। नरम मांस पिंड पर पकड़ तेज होती जाती है अंधेरी कोठरी दोपहर की तरह थरथरा उठती है बदन की ज्वाला में। गर्म सांसों की लू में झुलस उठते हैं सारे नियम।" इस बलात्कार के कारण राधा के जीवन में काला अंधेरा मंडराने लगता है।

अब वह पेट से है। लोकलाज से बचने के लिए वह गोमती में जान दे देती है। ब्रह्मचारी स्वयं तो राधा को भोगता है और दरोगा को भी सौंपता है।

ज्योतिषी बाबा अंधविश्वास में फँसा कर 'दोख उतरवाने' के बहाने आदिवासी नारियों का यौन शोषण करते हैं। राजा मुसहर की पत्नी सोना भी उसकी चपेट से बच नहीं सकी। एक दिन मेड़ पर घास छीलकर ले जाते समय ज्योतिषी बाबा ने उसके साथ बलात्कार किया था- "जनेऊ कान पर चढ़ाए ही पीछे से उसे गंझोटे में पकड़कर ले गए बाबा। सोना ने चीखना चाहा, मगर लोक-लाज के भय से चीख न पाई और बाबा ने उसे ब्राह्मणी बना ही दिया।" सामंती शोषण से आदिवासी नारी की मुक्ति असंभव है। ज्योतिष बाबा के जाल में फौजी की पत्नी रतिया भी फँसी है। जय और चाँदनी जब सामंती शोषण का विरोध करते हैं तो सारे शोषक पुलिस की मदद से जय पर हमला करते हैं। किशनगढ़ की इस अमानवीयता के बारे में कथावाचक कहता है- "कब तक बहती रहेगी फूले पेट वाली औंधी लाशें गोमती में?------ "और कितनी ऊँचाई तक पहुँचेगा सती की समाधि पर का लकड़ियों का टीला और कब तक अक्षय बना रहेगा खूनी कुंड? प्रतीक के गहरे निहितार्थों में 'अहेट' में नारी और दलित के भूत सवर्णों के भूत के साथ नाव पर नहीं बैठते, लौट जाते हैं।

'सर्कस' उपन्यास में नारी के शारीरिक और मानसिक शोषण को देखा जा सकता है। 'सर्कस' में नारी इच्छा से नहीं बल्कि मजबूरी से आती है। 'सर्कस' उपन्यास में मालिक और दलाल नारी कलाकारों का शोषण करते हैं। दर्शक नारी की कला की अपेक्षा उसके यौवन को देखते हैं। आदिवासी समाज की लड़की जब रस्सी पर बैलेंस करती है तब दर्शकों की फब्तियाँ देखिए- "गजब का माल है यार! देखो कैसे हिल रहा है। इस लड़की के पास तन ढकने के लिए पर्याप्त कपड़े और पेट के लिए रोटी की व्यवस्था होती तो क्यों यहाँ जान पर खेलकर लोगों को रोमांचित करती।

'सर्कस' में काम करने वाली लड़कियाँ अक्सर आदिवासी समाज की होती हैं। चंद्रा को अनाथाश्रम से नियोगी खरीदकर लाया था। अब वह हर समय असुरक्षा के बीच घिरी दिखाई देती है। हर समय इनके कपड़े उतारने की जल्दी मालिक या दलाल को होती है। अपनी दशा का वर्णन करते हुए चंद्रा कहती है- "मैं अकेली हूं रिंग में। रघुनाथ उसी तरह बुला रहा है, आओ मेरी चौदहवीं का चाँद, फिर उसने कहा, 'खोल दो कपड़े, लेट जाओ---- और----।' कलाकार को कम से कम कपड़ों में पेश करके अधिक से अधिक 'सर्कस' को प्रसिद्ध बनाया जा सकता है। अगर सर्कस में रहना है तो सर्कस के कम कपड़े वाले नियम का पालन करना ही है। कलाकार को जैसे करतब नहीं यौवन दिखाना हो।

कलाकार के मन में दरिंदों का अक्सर खौफ रहता है। स्वप्न में भी वे डरी और सहमी सी रहती हैं। ट्रेनिंग के दौरान अक्सर औरतों को दबोचा जाता है या अधिक से अधिक उनके नजदीक जाकर उन्हें फुसलाने का प्रयास किया जाता है। कुत्तों की लपलपाती जीभ से स्वयं को बचाना चुनौती है। समय से पहले ही 'सर्कस' की लड़कियों को बड़ा किया जाता है। चंद्रा अपने स्वप्न और हकीकत का बयान करती है- "उसकी बाहें मेरी कमर में। अंग-अंग नोच नोचकर खा रहा था वह जैसे परमेश्वर की दी हुई बोटियों को नोचते है बाघ।" "बहुत पहले ही बड़ी कर दी गई हूँ।" हर लड़की के मन में रघुनाथ के प्रति आक्रोश था जैसे वह बलात्कार या खून करके 'सर्कस' में आया हो। बाहर से तो 'सर्कस' की नारी आजाद लगती है पर वास्तव में पिंजरे में कैद मैना के समान है। हर घड़ी कोई न कोई आँख उस पर गड़ी रहती है। नियोगी रात अक्सर रीता के साथ बिताता था। नियोगी रीता का सरजू बौने के साथ विवाह करने का सुझाव देता है ताकि उसकी आड़ में वह अनैतिक संबंध बनाए रख सके। रीता को जब सरजू के साथ विवाह की बात अटपटी लगती है तब नियोगी समझाता है- "बात को समझने की कोशिश करो। एक ओट चाहिए हमें न? रही बात उसकी तो कभी-कभार ओब्लाइज कर दिया करना। नियोगी स्वयं विवाहित है फिर भी 'सर्कस' की लड़कियों का स्वाद चखना नहीं भूलता। नियोगी रीता को आखिर शादी के लिए मना ही लेता

है। रीता को पता था ऐसे गलत संबंध का अंजाम अच्छा नहीं हो सकता है।"

'सर्कस' में झरना के अक्सर नाम बदले जाते हैं। झरना, रूपा, सीता, गीता, सुजाता और कामिनी आदि। 'सर्कस' की बेनाम जिंदगी से झरना को घृणा होती है। पर क्या करें मालिक जो चाहे नामकरण कर सकता है और काम भी करा सकता है। सर्कस में नारी के प्रेम, संवेदना, रिश्तो की कोई अहमियत नहीं है। उसे हर समय रोल के अनुसार तोड़ा और मोड़ा जाता है। झरना को तो अब प्लास्टिक गर्ल बनना है। नारी प्रसिद्ध 'सर्कस' की हो या गली-गली में खेल करते नट-बाजीगरों की, समाज की दृष्टि से दोनों का स्तर एक ही है। समाज उसे भोग्या की दृष्टि से देखता है। दर्शक नारी की कला नहीं बल्कि उसके यौवन को देखने पाँच-पाँच बार आते हैं। वास्तव में प्रसिद्ध 'सर्कस' की कलाकार झरना और बाजीगर की लड़की दोनों के तरफ दर्शक वासनायुक्त निगाहों से ही देखता है। झरना स्वागत कथन में करती है- "क्या देखने आते हैं लोग? उसने तो यहाँ तक सुना है कि सिर्फ उसके करतब देखने पाँच-पाँच बार तक आए हैं दर्शक। क्या देखने आते हैं? चौधिआते, उत्तेजक विन्यास में उसकी यह गोलाइयाँ, यहीं खुली संगमरमरी जांघे, ये बाहें, उद्दीप्त यौवन----- नहीं। वह जैसे झूठलाना चाहती है उस सच को। तो यह रहे तुम्हारे करतब? 'हुंह!' कोई ताने कस रहा है उसके अंदर से---

------। कोई फुसफुसा रहा है, "क्या माल है" बाजीगर की लड़की पर वह विफल आक्रोश क्यों? "तुम कहाँ हो? यू आर हेयर! हेयर यू आर।" नारी को मालिक, दलाल या दर्शक वासना की नजर से देखते हैं।

सर्कस की नारियों के संदर्भ में आम स्त्रियाँ भी घृणा भाव रखती हैं। उसे लगता है 'सर्कस' की लड़कियाँ तेज होती हैं। जब जी चाहा किसी के भी टेंट में घुस जाती हैं। 'सर्कस' में मर्दों की कमी थोड़े हैं। वह बच्चा भी गिरवाती हैं। इसलिए तो शादी नहीं करती। सर्कस में जंघिया पहन कर काम करना, छाती निकालना आदि सामान्य नारियों के लिए वेश्या के समान है। झरना जब गाँव जाती है तो हम उम्र सभी लड़कियों का विवाह होकर दो-दो बच्चों तक की माँ बन गई है। झरना को भ्रष्ट मानकर गाँव में चर्चाएँ चलने लगी हैं- "--------शादी नहीं करेगी? जवान देह लिए सीना ऊँचा कर डोलती रहेगी? बिगाड़ देगी गाँव को। जाने कहाँ-कहाँ किस-किस से फँसी है।" झरना हो या अन्य नारी सर्कस में केवल उसका काम मालिक के लिए पैसा कमाना है। कुछ नया देने की लालसा में कभी नारी को अपाहिज तो कभी-कभी तो जान से भी हाथ धोना पड़ता है। केवल तीन हजार की बोली पर नाजिरा लैडर से गिरकर घायल हो जाती है। सड़न से बचने के लिए उसके हाथ काटने पड़ते हैं। सुशीला नामक कलाकार भी बाघ का शिकार बन गई थी। झरना विकास के साथ विवाह करती है। झरना की मूर्ति पर ध्यान देने वाला विकास

उसकी ओर ताकता तक नहीं। झरना पुरुष अहं से अभिशप्त होकर स्वयं विकास से संबंध विच्छेद करती है।

'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में चंदनपुर में प्रताड़ित नारी को प्रस्तुत किया गया है। दलाल, सूदखोर और गुंडों से यहाँ की आदिवासी नारी शोषित है। खदान मजदूरों की अपेक्षा उनकी औरतों को काम दिया जाता है। औरतों का अक्सर यहाँ यौन शोषण होता है। किससे शिकायत करें सारे इस कुचक्र में फँसे हैं। गरीब थापा की बीवी को भट्ट उसे नाइट शिफ्ट देकर भोगता है। थापा भी इस बात को जानता है पर क्या करें? बूढा नारी शोषण को बयान करते हुए कहता है कि नारी को ही क्यों काम दिया जा रहा है मरद बेकारी का शैतान लिए घूमें और औरतों को मिले काम। दिन भर बाहर क्या-क्या करती हैं, कौन देखता है?" गरीबी और बेकारी के कारण यहाँ सरेआम व्यवस्था आदिवासी औरतों का यौन शोषण करती है। चंदनपुर नरसंहार से अभिशप्त आदिवासी विधवाएं मुआवजों के लिए भटक रही हैं। व्यवस्था के दलाल मिस्तरी सोमारू की अपहृत गूंगी बेटी को वेश्या बनाते हैं। आदिवासी हेंब्रम का सारा वेतन हर माह सूदखोर हथिया लेते है। परिणाम स्वरूप पत्नी कलारा को ऊपरी आमदनी के लिए अनूप सिंह के साथ सोना पड़ता है। कभी-कभी तिवारी भी अपना कर्ज कलारा से ही वसूलते हैं। उपन्यास में

कालिंदी, केतकी, मंगलू की पत्नी, गोकुल की माँ, स्वाति, स्मिता भाभी व्यवस्था गत शोषण से अभिशप्त हैं।

'धार' उपन्यास में सौंताला आदिवासी नारियों के व्यवस्थागत शोषण को दर्शाया गया है। मैना के साथ जेल में जेलर बलात्कार करता है और बच्चे को मंगर के माथे पर थोपता है। मंगर उस बच्चे को लेकर मैना के इलाके में आता है। माँ की ममता में मैना सच्चाई का बयान करते हुए कहती है- "जेल में जेलर हमारे साथ जबरदस्ती किया, उसी खातिर बच्चा उसका मुँह पर मार के हम चला आया।" जेलर के बलात्कार की अमानत मैना के पास है। गलती करता है जेलर और सजा भुगतनी पड़ती है आदिवासी मैना को। कूड़े से लोहा-पीतल बटोरकर, आँचल और लहंगो में नन्हा गट्ठर बनाकर बिने हुए टुकड़े लेकर यहाँ सर्वहारा लड़कियाँ तौलने वाले के पास आ रही थी। सिपाही इनकी नंगी धोती, जाँघो, खुले अध खुले स्तनों और जननांगों को घूरता हुआ जांघे सहलाता था। संथाल आदिवासियों में से कोई भी स्त्री शोषण से बच नहीं पाई। मैना इस शोषण का बयान करते हुए कहती है- "हिया का कोई औरत नई बचा कोइइइई नई।" दरिंदों का जमघट इन औरतों के शोषण में घात लगाए बैठा है।

शहर में कोयला बेचते समय मैना की जवान लड़की सितवा का कोयला कैसे खरीदा जाता है और उसे शोषक अधिक पैसे भी

देते थे। आदिवासी नारियों को फुसलाकर यहाँ चकलाघर चलाया जाता है। यहाँ की बेटी की उम्र की लड़कियों पर पैसे फेंक कर सो शोषक मजा लूटते हैं। फ्रॉक पहने कोई कमसिन-सी गोरी लड़की हैदर मामा से लाड़ जता रही है- "रोज रोज आता सेठ। दस रुपये और दे देगा तो का घट जाएगा तुम्हारा।" लड़की मामा के गले में बाहें डालकर बच्ची सी लाड़ जताती झूलती है।" बबन ने तो मैना के छाती पर ही हाथ रख दिए थे। यह रवैया कितने मर्दों ने मैना के साथ अपनाया था। जेलर, पंडित सीताराम आदि कितने मर्दों ने यह हिमाकत की थी। आदिवासी नारियों को अक्सर शोषकों की गाली-गलौच और मार खानी पड़ती है। मैना की माँ को धार्मिक पाखंड के चलते डायन घोषित करके मारा जाता है। मैना को कितनी बार अपमान सहना पड़ता था। अंत में शोषक व्यवस्था मैना पर बुलडोजर चलाकर उसे समाप्त करती है।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में आदिवासियों की आर्थिक दुर्दशा का फायदा उठाकर नारियों का शोषण किया जाता है। व्यवस्था के सारे नुमाइंदे आदिवासी नारियों के स्वाद के लिए तरसते हैं। लड़कियों को फुसलाकर उनका यौन शोषण किया जाता है- "जानते हो सिरिफ जंगल का सिपाही नहीं अब तो भट्टी वाला सुख्खू सिंह का आदमी भी आता है और गाँव की लड़की लोग को फुसलाता है।" आदिवासी स्वयं बांझ औरत पर अन्याय अत्याचार करते हैं। एक नारी को

डायन घोषित करके उसकी हत्या भी करते हैं। शीला केरकट्टा आदिवासी नारी का एक दिन अचानक अपहरण होता है। अब उसे किसी शोषक की रखैल बनकर रहना पड़ता है।

'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में थारू आदिवासी नारियाँ पुरुषों की अपेक्षा सुंदर होती हैं। परिणाम उनका मालिक, पुलिस, नेता, डाकू आदि के द्वारा यौन शोषण होता है। विसराम बहू की भी इज्जत लूटी जाती है जिसके प्रतिशोध में काली डाकू बन गया था। काली भौजाई से पूछता है- "वो------ भउजी एक बात पूछनी थी।" वे कौन थे डाकू या पुलिस-------?" थारू नारियों को डाकुओं के लिए खाना पकाना पड़ता है। न पकाए तो डाकू अन्याय-अत्याचार करते हैं अगर पकाए तो पुलिस डाकुओं की मदद का इल्जाम लगाकर अन्याय-अत्याचार करती है। थाने में बंद भी करती है। इन आदिवासी नारियों की दोनों तरफ से मौत है।

जोगी सोखाईन से मिलकर औरतों का व्यापार करता है। काली की पत्नी सीता को भी वह बेचता है। एक दिन तो स्वयं की बेटी है गुलबिया को माल समझकर लाखू सिंह उठा ले जाता है। शिब्बन की पत्नी को भोगता भी है और बेचता भी है। सीता को जब काली के पास अपहृत करके लाया जाता है तब वह अपनी वेदना बयान करते हुए कहती है- "एक दिन एक ठो आदमी आया, बोला पहुँचा देंगे

तुम्हारे मरद के पास, हमको लाने को भेजा है। ऊ जनाना बेचता था। जोगी नाथ था शायद। ऊहे बंशपुरा में बेच दिया हमको दस हजार में।" यह वही सीता है जिसके साथ काली का गौना हो गया था। सोखाइन तो औरतों का व्यापार जानवरों के समान करती है। उसके नाक, लिलार, पेट, पुट्ठा और छाती तक को ग्राहक के सामने दिखाकर, दबाकर पैसा बढ़ाने के लिए उकसाती है। लड़की अपनी दशा पर रो रही है। तब सोखाइन दस हजार के माल को नकदी पाँच हजार में भी बेचने का संकल्प करती हैं- "दस हजार से कम के का होई ई माल, लेकिन ई रांड रो-रो के जान अकच्छ कइले बिया। पाँच हजार मिल जाई ता निकाल देइब। लेकिन एकदम नकदी, ई हाथ से दो, ऊ हाथ से लो।" फिर उन्होंने जोगी से भी साखी भराई, का जोगी जी, कऊनो गलत कही तो बोल-अ। आदिवासी समाज की लड़कियों को सोखाइन फुसलाकर बेचती हैं। बंसी ने सिकरहवा गाँव में नारियों पर सितम ढाये है। फेकन बहू केवल पड़ारन का कहना नहीं मानती इसलिए उस पर अपने भाई के द्वारा बलात्कार कराती है, अपनी आँखों के सामने। काली को छोड़कर सभी डाकू मलारी के यहाँ आकर अपनी तृप्ति करते हैं। एक दिन कुमार भी वही करता है मलारी कहती है तो क्या कहती है- "बस हो गया। बस हो गई पूछताछ, मिल गई बंदूक बस इसी के लिए कुत्ते की तरह आए थे दबे पाँव, आपकी औरते तो इज्जतदार है, ऊँची जात के बड़े लोग। हम गरीब नीच जाति की औरतों की क्या इज्जत। खुला दरवाजा है, जो चाहे मुँह मार ले। तुम

इतने दिन रूके कैसे रहे यही आश्चर्य है। बस यही तुम्हारी इंतहा थी। पर नहीं, प्रकट में सिर्फ यह कहती है- जल्दी से चले जाइए हाकिम बदनामी होगी। मालिक, पुलिस और डाकू आदिवासी थारू नारियों का कभी डरा धमकाकर तो कभी सर्च के नाम पर यौन शोषण करते हैं। यौन शोषण और अन्याय-अत्याचार से प्रताड़ित होकर मलारी गाँव के लोगों के साथ गाँव छोड़कर चली जाती है।

'सूत्रधार' उपन्यास में भिखारी ठाकुर अपने नाटकों के द्वारा नारी शोषण पर वार करते है। स्त्री शोषण एवं स्त्री पीड़ा की अभिव्यक्ति हेतु भिखारी 'बेटी वियोग' और विदेशिया नाटकों को प्रस्तुत करते है। उस समय गाय की तरह बेटी को बेचा जाता है। बिहार, यू• पी• और बंगाल में बेटियाँ खूसट बूढ़ों के साथ पैसे लेकर बाँधी जाती थी। बेटी बेचने की प्रथा को देखकर भिखारी स्वयं मवाद बाहर निकालने हेतु भोकार मारकर रोना चाहते है। बेटी की रुलाई को गीतों में बाँधा जाता है- "एक बबुनी, दूसरी बबुनी, तीसरी बबुनी-------- बेटियों का अनंत क्रम। वीर-बहूटियों-सी रेंग रही है बेटियाँ, यह बिहार, यूपी, बंंगाल में बेची जा रही है बेटियाँ खूसट बूढों के हाथ। हलाल की जा रही है बेटियाँ और उनकी रुलाई को मंतर और गीत और गारी और चुहूल से ढका जा रहा है। बेटी स्वयं रोती बिलखती है फिर भी सामंती मानसिकता में कोई बदलाव नहीं आता। इस परिवेश में गरीबी और कर्ज के तले दबकर पिता

अक्सर सयानी लड़की को मालदार बूढ़े को बेच देते हैं। बेमेल विवाह की समस्या इस परिवेश में अधिक है। गाय, रस्सी पकड़ने वाला कसाई है या किसान, इसकी परवाह किए बगैर पीछे-पीछे चलती है वैसे लड़की भी चल देती थी। विवाह से अभिशप्त लड़की की वेदना यहाँ अभिव्यक्त होती है-

"रौपेया गिनाई लिहल-अ, पगहा धराई दिहल-अ

चेरिया के छेरिया बनवल-अ हो बाबू जी!

गिरिजा कुमार कर-अ दुखवा हमार पार-अ

ढर-ढर ढरकत ब लोर मोर हो बाबू जी।"

स्त्री पीड़ा की अभिव्यक्ति में सामंती संस्कारों का विरोध था। स्त्रियों का भिखारी को समर्थन मिलता था। भिखारी का बेटी वियोग नाटक देखकर हजारीबाग के पाँच सौ लोग भों भों करके रोने लगें और शिवजी के मंदिर में जाकर उन्होंने कसम खाई थी आज से बेटी बेचना बंद और जो बेटी बेचेगा उसे वहिष्कृत किया जाएगा। इसके बाद बेटी बेचने की प्रथा पर लगाम लग गई थी। साथ ही रोजी-रोटी के लिए विदेश में बसे पति की याद में पत्नी रात-दिन आँसू बहाती है। उस नारी की वेदना बाहर नाटक में देखी जा सकती है।

विधवा की समस्या बड़ी भयंकर थी। पति की मृत्यु के बाद इन नारियों पर जुल्म ढाया जाता था। जैसे उसने स्वयं

पति की हत्या की हो। धनी सिंह की पत्नी तो भिखारी को देखकर भोंकार मारकर रो पड़ी थी। पति कितने पाप क्यों न करें, उसे ऊँचा स्थान मिलता है। पत्नी बेचारी उसे सुधारने के लिए क्या-क्या नहीं करती फिर भी उसकी दुर्दशा। धनी सिंह की पत्नी के बाल छीलते समय भिखारी स्वयं प्रताड़ित हैं- "धनी सिंह की विधवा उन्हें देखते ही भोंकार मारकर रो पड़ी। वह औरत जो सुहागिन रहते हुए भी अभागिन जैसे जिंदगी जीती रही, जिसका मर्द सारे पाप करते हुए भी समाज को ठाकुर और उसका सुहाग बना रहा, पति सुधर जाए इसके लिए क्या-क्या पूजा, अर्चना और टोने-टोटके नहीं किए इन्हीं हाथों से पांवों में महावर लगाई थी, इन्हीं हाथों से उसके लंबे-लंबे काले बालों को छील-छीलकर गिरा रहे थे। कलेजा मुँह को आ रहा था।" कितनी मुश्किल बात थी। विधवा की यह दशा देखकर न केवल विधवा रोती है बल्कि स्त्री मुक्ति के समर्थक भिखारी भी मन ही मन रोते हैं।

समाज में वेश्याओं का स्थान नीच माना जाता है। सामंती सोच के व्यक्ति कलकत्ते में वेश्याओं के अड्डे पर जाकर रंगरेलियाँ मनाते हैं। इधर उनकी पत्नियाँ परेशान हैं। वेश्याओं को जबरदस्ती नर्क में ठेला जा रहा है। बाबूलाल वेश्याओं की वास्तविकता का बयान करते हैं- "तुम क्या जानो किसी रंडी या रखेलिन की जिंदगी क्या होती है? मैंने देखी है वह जिंदगी। एक दूसरा नरक। एक तो तुम नरक

से निकाल रहे हो, दूसरे को और नर्क में ठेल रहे। एक उजड़ा घर बस रहा है और दूसरा बसा घर उजड़ रहा है।" वेश्या का जीवन तो नारी के लिए नर्क की यातना के समान है इसे केवल वही समझ सकती है, दूसरे केवल उस पर व्यंग करते हैं।

५.२ आंतरिक समस्या

संजीव की मान्यता है कि जब तक असमानता तथा धर्म की विभीषिका को समाप्त नहीं किया जाता तब तक इससे अभिशप्त जन की मुक्ति असंभव है। भारत में सर्वहारा समाज पर जितने अन्याय-अत्याचार जातीयता के चलते किए गए हैं, ऐसे दुनिया में कहीं नहीं हुए। सर्वहारा समाज सनातनियों से खौफ खाया हुआ है। भारतीय वर्ण व्यवस्था की असंगत नियति के कारण सर्वहारा समाज दाने-दाने के लिए मोहताज है। गरीबी इतनी मजबूरीवश गोबरहा (गोबर से निकाले गए अन्न) तक खाकर उसे जिंदगी बसर करनी पड़ती है।

सर्वहारा समाज की दयनीय अवस्था के लिए धार्मिक पाखंड और अंधविश्वास का विशेष योगदान रहा है। नब्बे के दशक में उभरा उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण सर्वहारा को तबाह करते हुए पूंजीवाद को स्थापित करता है। सर्वहारा की दशा के लिए राजनीतिक भ्रष्टाचार अधिक मायने रखती है। पर राजनीति की पूँजीवादी व्यवस्था के साथ इसकी जोड़ी जम रही है। परिणामतः अवैध तरीके से

राष्ट्रीय संपत्ति का दोहन किया जा रहा है और सर्वहारा समाज को बेरोजगारी का शिकार बनाया जा रहा है पुलिस 'खल निग्रह' की अपेक्षा 'सद निग्रह' का काम अधिक कर रही है। ठेकेदारों के अमानवीय शोषण के कारण सर्वहारा समाज आज भी बेकार की दशा में जीता और मरता दिखाई देता है। सर्वहारा समाज के शोषण के लिए भ्रष्ट सर्वहारा समाज के शोषण के मूल में सामंती और धर्म व्यवस्था और जातिवाद है। मनु की वर्ण व्यवस्था आगे जाति के रूप में ढलती है। सर्वहारा समाज का व्यक्ति कितना भी प्रतिभा संपन्न क्यों न हो सनातनी उसे जाँच का हवाला देकर अपमानित करने से नहीं चूकते। 'पिशाच' कहानी के माध्यम से एक तरफ से आपबीती बयान करते हैं संजीव। पिशाच रूपी महात्मा बाबा मरकर भी नहीं मरता।

'किशनगढ़ की अहेरी' उपन्यास में अवध अंचल की आत्महंता अहेर प्रवृत्ति के मूल में धर्म और जाति की शोषक मानसिकता है। सामंतशाही, वर्ण और जाति व्यवस्था के कारण उच्च वर्ग सर्वहारा समाज पर अन्याय-अत्याचार करता है। धर्म और जाति के कहर के कारण ही सर्वहारा समाज हर समय किशनगढ़ छोड़कर भागना चाहता है। जातीयता का घमंड इतना है कि सर्वहारा समाज का दलित 'राजा' मुसहर अपनी नवविवाहिता पत्नी सोना को रिक्शे पर भी नहीं बैठा सकता। राजा और सोना को रिक्शे पर बैठा देखकर जदुनंदन सिंह कहता

है- "मरजाद भूलि गए का रे गाँव कई---------?" जदुनंदन सिंह की जातीयता युक्त डाँट सुनने के बाद राजा और सोना पैदल घर आते हैं। जातीयता के कारण असहाय राजा की पत्नी सोना का यौन शोषण ज्योतिषी बाबा करता है।

किशनगढ़ में वैवाहिक संबंधों का आधार जाति है। ब्राह्मण विधवा राधा को दलित वंशी चाहता है और राधा भी उसे चाहती है पर जातीयता के कारण वे विवाह नहीं कर सकते। राधा वंशी के साथ भागने उसके घर में घुस जाती है। तब वंशी का जातीय डर देखिए- "हमको तू बोटी-बोटी कटवाय देबू आज। कहाँ लुकवाई एह? इधर-उधर ताककर फिर बौखला उठा, तू भाग काहे? कहाँ तू बाभनि कहाँ हम------।" राधा को स्वयं का मामा उसके वैधव्य का फायदा उठाकर भोग सकता है और दरोगा को भी सौंप सकता है। उसके साथ कोई बड़कवा विवाह के लिए तैयार नहीं। राधा वैधव्य की यातनाएँ सहती है तो चलता है पर वह अगर दलित वंशी के साथ संसार करना चाहती है तो ब्राह्मणों की नाक कटती है। वंशी के मन में जातीय डर है। राधा को खटिया के नीचे से घसीटते हुए निकाला जाता है और वह गोमती में कूदकर जान दे देती है। गाँव का मास्टर भी जाति देखकर अंक देता है। जाति और शेखी की बात आने पर शोषक हिंसक पशु में तब्दील होते हैं। वंसी जातीय झूठे सम्मान के लिए इनरपती जैसे शोषक बेटी के विवाह में निरर्थक जाते हैं।

किशनगढ़ में सर्वहारा समाज का व्यक्ति स्टेशन मास्टर या अन्य नौकर पेशा के रूप में आता है तो उसे जाति छुपाकर रखनी पड़ती है या जाति का जिक्र आते ही स्वयं को ऊँची जाति का बताना पड़ता है। निम्नजातीय को जब स्वयं तबादला कराकर किशनगढ़ आया तब तक उसकी निम्न जातीयता को लेकर सहपाठी चर्चा करते हैं- "मरने के लिए कोई जगह नहीं मिली थी तुम्हें?-------- अगर यहाँ के बड़कवे यह जान गए कि तुम अमुक जाति के हो तो सारी स्टेशन मास्टरी की अकड़ जाती रहेगी। चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों की जूतियाँ ढोते उमर कटेगी।" जहाँ अफसर तक को जातीयता नहीं बख्शती वहाँ सर्वहारा समाज के दरिद्र व्यक्तियों का क्या कहें? किशनगढ़ की सारी सुख-सुविधाएँ जातीय आधार पर बड़कवो ने हथिया ली है। नकली जाति और वर्ण व्यवस्था निर्माण करके सर्वहारा समाज का विनाश किया जा रहा है। असंगत कर्म प्रधान संस्कृति के चलते सर्वहारा समाज शोषक घड़ियालों के पेट में समाते जा रहे हैं। वर्ग विहीन समाज की स्थापना किए बगैर सर्वहारा समाज को सम्मान की जिंदगी दुर्लभ है। ब्राह्मण जय निम्न वर्गीय चाँदनी से विवाह करता है। परिणाम स्वरुप ज्योतिषी बाबा उसे अपनी संपत्ति से बेदखल कर देते हैं।

चाँदनी का निम्न जाति होना ही उसके सामूहिक बलात्कार का मुख्य कारण है और जय की हत्या का भी। जय हरिजनों

के साथ हल चलाता है और उन्हीं की बस्ती में रहता है, तो चाँदनी हरिजन औरतों की तरह जय का कलेवा लेकर जाती है। जय और चांदनी का यह बर्ताव सनातनियों को खलता है।

ब्राह्मण ज्योतिषी बाबा भीख, ओझाई, ज्योतिष और सूदखोरी करके इज्जतदार बन जाता है और दलित वंसी, कालू, हरिया, रामू आदि रात-दिन मेहनत करने के बाद भी अपमान सुनने और मार के हकदार है। सर्वहारा व्यक्ति की जमीन, गाय-गोरु तो छीने गए है अब वे स्वयं भी बडकवों के पास बंधक है। प्रत्येक बडकवों की जातिय विशेषता है जिसकी आड़ में सर्वहारा समाज का शोषण यही मुख्य लक्ष्य है। किशनगढ़ की जातीय विकृति को बयान करते हुए ठाकुर उस्ताद (शिव बाबू) कहते हैं- "लाला माने ला-ला। जो घूस न ले वह लाला कैसा? और जिसे देखते ही आदमी सूखकर कांटा ना हो जाए वह ठाकुर कैसा? शिष्य ने उस्ताद की वंश गरिमा बताई। जो आदमी की सात पुश्त को न खरीद ले वह बनिया कैसा? शिवबालक जी ने बहु सावकी तिरस्कृत बनियागिरी की महत्ता बतलाई, "और जिसे देखते ही आदमी भसम ना हो जाए वह बाभन कैसा।" ऊंची जाति वालों की सारी विशेषताएं सर्वहारा समाज को प्रताड़ित करने में हैं। सरकार द्वारा तय मजदूरी भी सर्वहारा समाज को प्रताड़ित करने में है। सरकार द्वारा तय मजदूरी भी सर्वहारा को नहीं दी जाती। ऊपर से धमकाकर उनसे बेगार ली जाती है। ज्योतिषी बाबा सोना

का यौन शोषण करता है यह उसका पति राजा जानता है पर क्या करें? आखिर वह स्वयं खेत में मड़ई डालकर रहने लगता है। हरिया नामक दलित ने रुपई की बहन पुष्पलता के लिए जीवन केवल पेड़ का आम तोड़कर दिया था इसी से उसकी हत्या होती है। जातीयता के अहं में किशनगढ़ में सर्वहारा समाज का दमन किया जा रहा है।

'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में जातीयता के कहर को देखा जा सकता है। पांडे के खेत और घर में फेंकन दुसाध और उसकी पत्नी काम करते हैं। एक दिन फेकन बहू के छूने मात्र से पाड़न के बर्तन भ्रष्ट हो गए थे तब पड़ाइन अपने जातीय दम्भ का परिचय देते हुए कहती हैं- 'अरे तेरा हिम्मत कैसे हुआ रे बाभन का बर्तन छूने को----।' दूसरे दिन फेंकन पत्नी की ओर से माफी माँगने लगा था और पत्नी को जाति-पाँति के नियमों का पालन करने का सुझाव दे रहा था। पड़ाइन ने फेकन बहू को हाथ-पाव टीप देने(मालिश करने) को कहा था, फेकन बहू का कहना था कि बर्तन अगर भ्रष्ट होते हैं तो आपका देह भी हमसे छुवा जाएगा। इस बात का पड़ाइन को गुस्सा आया। पांडे और पड़ाइन ने फेकन बहू को हाथों से पकड़े रखा था और पांडे का साला उसे दबोचे हुए था। एक औरत केवल जातिय अहं में दूसरी सर्वहारा दुसाध औरत का बलात्कार करवा रही है। इस घटना को लेकर पंचायत बैठ गई। पंचायत ने भी जातीय फैसला दिया- 'पांडे या उसके साले ऊँची जाति के

आदमी फेकन बहू जैसी नीच जाति के साथ यह कर्म कर नहीं सकते।' फेकन को टरका दिया जाता है। फेकन जब परशुराम डाकू के पास गया तो उसने भी अपने जातीय दंभ का परिचय देते हुए कहा, हम चमारों, दुसाधों, धोबियों, कुम्हारों, लोहारों और नोनियों का केस नहीं लेते। पांडे, पंच, पुलिस और डाकू परशुराम यादव तक फेकन दुसाध को केवल जातीयता के चलते प्रताड़ित करते है।

'सूत्रधार' उपन्यास में दलित-विमर्श की सशक्त अभिव्यक्ति है। भोजपुरी के लोक-कलाकार भिखारी ठाकुर के केवल नाई जाति के होने के कारण उन्हें अपमानित किया जाता है। असंगत वर्ण व्यवस्था के नाई जाति के हिस्से न्यौतने और अपमानित किया जाता है। असंगत वर्ण व्यवस्था में नाई जाति के हिस्से न्यौतने और टललुआई बांध दी है। भिखारी अपने जातीय धंधे के साथ-साथ मवेशियों को भी चराते हैं और पाठशाला में भी जाते हैं। गाँव की मान्यता है कि प्रत्येक बालक को अपनी जाति के हिस्से आया काम ही करना चाहिए। जब भिखारी पाठशाला में जाते हैं, तो सनातनी बच्चे उनकी जाति को लेकर व्यंग करते हैं और पढ़-लिखकर क्या करना है हजामत का काम कौन करेगा जैसा असभ्य फब्तियाँ कसते है- 'ई कोह-अ रे?' बड़ जात का कोई बच्चा कनमनाकर खड़ा हो गया, जैसे बलिष्ठ पिल्ले किसी मर गिल्ले-पिल्ले के आते ही चौकन्ने हो जाते है। "नउवा! नउवा------? ई हो पढ़ेगा?

पढ़-लिखके ते का करेगा रे?' 'नौवा कौवा, बार बनौवा। और तरह-तरह की अश्लील टिप्पणियाँ।' हजामत के बनाई? नहरवी ले ले बाडे रे, तनी नह काट दे।" भिखारी को बचपन से ही जातीय अहं ने आहत किया था। रोज-रोज के इस जातीय अपमान से तंग आकर भिखारी आखिर पढ़ना छोड़ देते हैं।

भिखारी गाँव-गाँव अक्सर पैदल ही न्यौते लेकर जाता है। भूखा, थका-प्यासा भिखारी जब पहुँचता है तो कोई उसकी बात सुनना नहीं चाहता। जानवर की तरह ही दूर से ही रोटी, जूठन-काछन मिलता है और पानी कुए पे पीना पड़ता है और कुएं की जगत पर किसी पेड़ की छाया में सोना पड़ता है। एक दिन भिखारी को किसी पुरोहित ने उसका गौर वर्ण और सुंदर व्यक्तित्व देखकर ब्राह्मण समझकर यज्ञशाला को रंगीन अक्षत से चौक पूरे करने का काम सौंपा था। परिचित सनातनी किसी व्यक्ति ने पुरोहित को भिखारी के नाई जाति का बोध कराया तब पुरोहित भी जाति न छुपाने की हिदायत देते हैं। 'आपको ब्राह्मण नहीं भेटाया जो नाई के लड़के से जग्गशाला भरस्ट करवा रहे हैं? 'ई नाऊ है?' 'तब का------|------' 'जाओ बच्चा दूसरा काम देखो। एक बात सुन लो, जात मत छुपाना। पाप लगेगा। वास्तव में यज्ञ के लिए सारी सामग्रियाँ सर्वहारा समाज ने ही लाई थी पर अब वे अगर इन्हें छूते हैं तो वह अपवित्र बन जाती हैं। इस जातीय साजिश को भिखारी मन ही मन

महसूस करते हैं। गाँव के नाई जाति के बच्चों को पढ़ना ही नहीं चाहिए। ऐसी जातिय साजिश होती है। जिस छूरे से नीच जाति की दाढ़ी बनाई उससे ऊँची जाति की दाढ़ी न बनाई जाए। अगर ऐसा होता है तो वह गुस्सा हो जाते हैं। दो आने में सारे शरीर की मरम्मत करा ली जाती है। नाई को देखते ही सनातनियों की हजामत बढ़ जाती है। औरत कितनी भी गुणवती क्यों न हो, भोगी के लिए उसका सिर्फ एक गुण है- भोगने की चीज। वैसे ही नाई कितना भी ज्ञानी या बड़ा व्यक्ति क्यों न रहे सनातनियों का एक ही काम है सेवा लेना और घृणा करना।

नाई जाति की केवल घृणा ही नहीं की जाती बल्कि उसका आर्थिक शोषण भी किया जाता है। साल भर सेवा लेने के बाद छांटल-छूटल उन्हें उपेक्षा भाव से दिया जाता है। भिखारी अपने गाँव में जब कला प्रदर्शित करना चाहते हैं तो जातीयता के कारण उसका मजाक उड़ाया जाता है। जातीयता अपने आप में छद्म है। जिनसे सेवाएँ ली जाती हैं उन्हीं से छुआछूत भी की जाती है जो स्पृश्य है, उनसे भी। वस्तुएँ लाने वाले भी ही छूत वस्तुओं को लगाना असंगत लगता है। यज्ञशाला भिखारी के कारण अपवित्र बनेगी। इस उपहास से वे स्वागत कथन में कहते हैं- "गंगाजल नाई या कहार ढोकर ले आए थे, लकड़ी लोहार फाड़ रहा था। दूध, दही अहीर के घर से आया होगा। कलशा परई कुम्हार दे गया होगा। दोना-पत्तल नट या डोम दे गए होंगे। आम के

पल्लव एक मल्लाह का लड़का तोड़ गिरा रहा था, यह उसने खुद देखा, अक्षत बनिया की दुकान से आया होगा। कपड़े और दूसरी चीजों को भी ब्राह्मणों ने नहीं दिया होगा। मगर ये सारे लोग अब इन्हें छू भी नहीं सकते। शोषक सामंतवादी व्यवस्था की यह धार्मिक और जातीय अमानवीयता है।

भिखारी का नाम प्रसिद्ध हो रहा था। जब वे अपराधी व्यक्ति बन गए थे फिर भी लोग उनसे दाढ़ी, हजामत और सेवा लेने में स्वयं की शेखी बघारते थे। भिखारी को देखते ही सनातनियों की बाल, दाढ़ी बढ़ जाती थी। साधारण से साधारण सनातनी भी सामने पड़ जाता है तो वहाँ भिखारी को उठकर खड़ा होना पड़ता है। अगर नहीं खड़े हुए तो जाति को लेकर अपमान सहना पड़ता है। अब तो भिखारी को सामने ऊँची जाति का व्यक्ति दिखते ही खड़े रहने की आदत-सी पड़ गई है। उनके इस अपमान भरे रवैये को देखकर बाबूलाल कहता है- "यही कि किसी के आने पर भैंस खड़ी नहीं होती, गाय खड़ी नहीं होती, कुत्ता बैठा रहता है, चिरई बैठी रहती है, लेकिन तुम--------? खड़े हो जाओगे।" भिखारी का नाच देखने के लिए ऊँच-जातियों के बापों ने अपने बेटों को मना किया था। राजपूत अगर भिखारी की नाच मंडली में नाचता है तो उसे समाज से बहिष्कृत किया जाता है।

नाच दल अक्सर सर्वहारा समाज के होते थे जो आर्थिक, सामाजिक या जाति प्रताड़ना के शिकार थे। गरीब नाच दलों को अक्सर गावों में नाच दिखाते समय सनातनियों के द्वारा अपमानित किया जाता है। कभी-कभी तो हाथापाई तक की नौबत आती है। सामंती डर के कारण कभी-कभी तो पीछे से ही भाग खड़े होते या अंधेरे में अपना रास्ता पकड़ते हैं। राजपूत अक्सर नाच मंडली की धनराज को लेकर इन्हें धमकाते हुए भी दिखाई देते हैं। उच्च जाति का कोई भी व्यक्ति इन्हें अपने गुस्से का कोपभाजन बना सकता है। कभी-कभी ऊँची जाति के आतंक या गुंडागर्दी के चलते खेल में धांधली मच जाती थी खेल को बीच में ही रोकना पड़ता था। ऊँची जाति के लोग अक्सर नाच मंडलियों के साथ पैसा, तिथि, वार या ठेके को लेकर अमानवीयता बरतते हैं, 'कहो तो हम तिथि-वार बदल दे।' यहाँ भी गुंजाइश न निकल पाती तो धमकियाँ देकर चले जाते, नाचने-गाने लायक नहीं रहने देंगे, सोच लो नान्ह जात, दू पैसा का आँखि से देखल-अ कि दिमाग-ए सनिक गईल।' सामंती अहं से डरावनी अवस्था में नाच मंडलियों को नाच करना पड़ता था।

जिस समय प्रेमचंद 'गोदान' के द्वारा सामाजिक जन जागरण कर रहे थे उसी समय भिखारी जातीयता के विरोध में खड़े दिखाई देते हैं। जो अपने परंपरागत नाई के जातीय धंधे से परे होकर नाटक खेलते पर जातीयता है कि उनका पीछा छोड़ने को तैयार ही नहीं

है। न केवल भिखारी, जो भी निम्न जातीय व्यक्ति लोक-कलाकार के रूप में सामाजिक सुधार करना चाहता है उसे इसी जातीयता का शिकार बनाया जाता है। नाच दल को खाना खिलाते समय भी जानवरों के समान सलूक किया जाता है। पहले साफ-सुथरी जगह पर ब्राह्मण, राजपूत और अन्य अछूतों की पाँत बैठाई जाती है। इन्हें दही, बूंदी या अन्य व्यंजन न के बराबर मिलते हैं। लच्छन राय इस अपमान को बड़बड़ाते हुए बखान करते हैं- 'हमेशा ऐसा ही होता है। खाने में भी देखो दही, बुनिया चन्नव की तरह छिड़ककर चले गए, जैसे हम 'आदमी' ही नहीं है। तुम सभी को खाना हो तो खाओ, हमसे तो नहीं खाया जाएगा ऐसे। नाच गिरोह का सिधा, पिसान, नौहड़, ईंधन मांगेंगे अब से। पाँत में खाना खाते समय भी जातीयता का दर्शन होता है। सनातनियों ने तो भिखारी को 'समाजद्रोही' की उपाधि दे रखी थी जिनका मानना था कि भिखारी सारे लड़के-लड़कियों को खराब कर रहा है।

राजा साहब घर के नौकर के साथ जानवरों के समान पेश आते हैं। सारे नौकरों को छोटी-सी गलती के लिए पीटा भी जाता है और उनका दाना-पानी भी बंद किया जाता है। कहार जाति का गंगा राजा साहब का नौकर है। कहार जाति को पालकी वाहक बनकर जीना पड़ता था। गंगा के बाप ने राजा साहब की दुल्हन की डोली ढोकर लाई थी। आज गंगा को घोड़े को दाना देने के लिए देर होने के कारण

उसे राजा साहब कोड़े से पीटते हैं और भूखा-प्यासा कोठरी में बंद कर देते हैं। अपनी अन्याय ग्रस्त स्थित को भिखारी के सामने रुआँसे अंदाज में गंगा पेश करता है- "परसों तनी आँख लग गई थी। भोरे-भोरे घोड़ा को वूट(चना) देना था, देर हो गई। बस हमार दाना बंद कर देलन। कोड़ा से पीटलन हमरा के, कोड़ा से। कोठारिया में बन्न करवा दिहलन।' 'तोहरे साथ होखेला कि और सबके साथ।' सबके साथ।" जातीयता के चलते कितना कहर सर्वहारा समाज पर किया जाता है।

राजपूत 'नाचना' नीच जातियों का काम मानते हैं। राजपूत चोर, बदमाश, पियक्कड़ व्यभिचारी आदि रहा तो राजपूतों को हर्ज नहीं पर अगर वह नीच जाति के समान नाचता है तो उनकी बेइज्जती होती है क्योंकि नाचना राजपूतों की शान के खिलाफ है। नाच तो सर्वहारा समाज का काम है। शादी के लिए रिश्ता चांदी सिंह नचनिया है इसलिए ठुकराया जाता है। 'लेकिन नचनिया------? न भाई न। भाँड, लौडे का काम है जो नीच जाति के हो सकते है। जो नाचे, वो राजपूत का बच्चा नहीं।' हर समय नाच और नाच मंडलियों को जाति के आधार पर ताने सहने पड़ते हैं। बड़कवे सारे काले धंधे करके बड़े बने रहेंगे और सर्वहारा जीव अगर रोजी-रोटी के लिए नाचते हैं या कला के द्वारा सामाजिक विसंगतियों पर वार करते हैं तो वे उपेक्षा और घृणा के भागी बन जाते हैं।

कुतुबपुर में जातीयता का बहसीपन पानी भरने में भी दिखाई देता है। गाँव में केवल एक ही कुआं है वह भी पंडित का। नहाने धोने और जानवरों के लिए पानी गंगा से लाया जाता था पर पीने के लिए पंडित का कुआं एकमात्र आधार था। वर्ण व्यवस्था पानी भरने में लागू थी- "पहले बाबा जी लोग पानी भरते, फिर बाबू साहब लोग, फिर वह जातियाँ जिनका छुआ चलता था, तब बारी आती थी कौमीनों (अस्पृश्य नीची जाति वालों) की। उनके घर की औरतें गगरी-गगरा लेकर बैठी रहती। जरूरतमंद घिरौरी-मिनती कर किसी से मांग लेते, एक अनार और सौ बीमार। बखत-बखत जरूरत पर गंगा जी तो थी ही।" प्रकृति निर्मित पानी पंडित के कुएं से भरने के कारण जातीय आधार पर पानी भरने के लिए नंबर लगाना पड़ता है। समर्थ होने पर सबसे पहले भिखारी कुआँ ही बनवाते हैं जहाँ छुआछूत का भेद नहीं, सबको पानी भरने की छूट थी।

'आकाश चम्पा' उपन्यास में जातीयता के बंधन सख्त हैं तो उन्हें समाज और गाँव से वहिष्कृत किया जाता है। जातीयता का अहं ब्राह्मण नारी में अधिक दिखाई देता है। जो जातीयता के आधार पर अपनी श्रेष्ठता बखान करती जाती है। नल पर पानी भरने आई ब्राह्मण औरतों के वार्तालाप से जातीयता की दुर्गंध आती है, " सब कुछ छुपाना चाहिए लेकिन जात नहीं। हमारा गाँव में आदमी खड़ा नहीं हुआ कि पहले

उससे जाति पूछा जाएगा। फिर जथा जोग खातिर-पानी।" "एकदम ठीक बात, अब किसी नीच जात को लोटा दे दिया तो फिर वो लोटा घर में कैसे जाएगा।" हर औरत ब्राह्मण धर्म की श्रेष्ठता और अछूतों की बुराइयाँ करती है। जातीयता केवल सर्वहारा समाज को ही बर्बाद नहीं करती बल्कि हिंदू और मुसलमान भी इसी के कारण एक-दूसरे के बैरी बन गए हैं। हिंदू और मुसलमानों के दंगों में भी सर्वहारा व्यक्ति ही अक्सर मरता या बर्बाद होता है। जुनूनियों के बहशीपन से छात्र भी नहीं छूट सके।

जियालाल आक्रमणकारियों की बर्बरता का असभ्य भाषा में अफवाहों को हवा देते हैं, ई कटुआ लोगों का मन बहुत बढ़ गया है सर। यूनिवर्सिटी के बगल में हिंदू लड़का लोग रहता है। आज रात एक ट्रक मुसलमान आए। घर में घुस-घुस करके काटा और ट्रक में भरकर ले गए लाश।' जियालाल मास्टर मोतीलाल को मुसलमानों की अमानवीयता को बता रहे थे। तो दूसरी ओर हिंदू भी मुसलमानों पर आक्रमण करके हत्या-दर-हत्या का प्रतिउत्तर देते हैं। कितने को काटकर गंगा में बहाया गया।

कहार जाति के मास्टर कृष्ण कुमार को जाति के आधार पर अपमानित किया जाता था। ब्राह्मण मनु महाराज तो कृष्ण कुमार उर्फ के•के• का पवित्र नाम सुनकर मनु स्मृति में जो जातिगत नाम धारण को बताया गया है, उसका उच्चारण करने लगते हैं।

मनुस्मृति में कहा गया है कि नाम ऐसे रखे जाने चाहिए। जिन से पता चल जाए कि कौन जाति का है- जैसे ब्राह्मण का मंगल युक्त, क्षत्रिय का बल या पराक्रम सूचक, वैश्य का धन सूचक और शूद्र का नाम जुगुप्सापूर्ण रखना चाहिए।

"मांगलल्य ब्राह्मस्य स्यात् क्षत्रिस्य बलान्वितम्।

वैश्वस्य धनसंयुक्तम् शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्।।"

कृष्ण कुमार को अक्सर 'मनुस्मृति' के•के• की जगह है कालू कहार की उनके पीछे कहा करते थे। कभी-कभी 'कहरा' भी कहा करते थे। केवल शिक्षक की जातीयता के अंध घमंड में नहीं थे, कक्षा के बच्चे भी उन्हीं के सिखाए हुए थे। के•के• नवीं कक्षा में पहली बार गए तो ब्लैक-बोर्ड के एक कोने में पालकी ढोते दो कहारों का चित्र अंकित था, दूसरे कोने में बहंगी ढोते दो कहारों का। इस जाहिल हरकत के लिए बच्चों को डाटा गया पर किसी ने भी भेद नहीं खोला।

स्कूल में अब जातीय ध्रुवीकरण हो गया था। मनु महाराज रिटायर हो गए। वे चाहते थे कि उनकी जगह पर उनका बेटा आ जाए पर ओ•बी•सी• कुम्हार का लड़का आया था। मनु महाराज गुस्से से आरक्षण पर वार करते हुए कहते है- "इस बेटीचोद आरक्षण को चालू किसने किया। माने सबसे पहले किसकी खोपड़ी में यह कीड़ा बिलबिलाया

था।" सनातनी स्वयं तो सारे फायदा उठाते हैं और अपनी संतानों की भी व्यवस्था कर जाना चाहते हैं पर वह सफल नहीं होता तो सर्वहारा समाज और आरक्षण के खिलाफ आग उगलते हैं। एक दिन तो आरक्षण और जाति से चली आ रही चर्चा ब्राह्मणों की क्वालिटी पर आ गई। के•के• आरक्षण का समर्थक था और जातीयता का बैरी, इसलिए उसने मुद्राराक्षस की ब्राह्मण कैसे साँठ-गाँठ करके अव्वल आते हैं, इस आशय की कहानी पढ़ी तो मोतीलाल का बेटा ज्ञान ने के• के• की नकल में स्कूल में ही पिटाई की और के• के• ज्ञान का सिर्फ हाथ पकड़कर रह गया। मार खाते हुए भी वह मोतीलाल की इज्जत का ख्याल कर रहा था- 'मैंने मोतीलाल सर की अपने बाप से भी ज्यादा इज्जत किया है। खैर मनाओ कि तुम उनके बेटे हो। आज तुम्हें जितना हाथ-पाँव चलाना है, चला लो, आज-भर मैं पलटकर वार नहीं करूंगा। लो, मैंने, हाथ छोड़ दिए।' ब्राह्मण जाति का होने के कारण कोई ज्ञान को नौकरी से कैसे निकाल सकता है?

'रानी की सराय' किशोर उपन्यास में जातीयता के चलते ऊँची जाति अक्सर हलवाहों पर अन्याय-अत्याचार करती थी। सारे ठाकुर एक होकर बेगार के पक्षधर बन गए थे। उनकी यह मान्यता है कि कि जाति भगवान ने बनाई है। जिसमें कुछ जातियाँ राज करने के लिए और कुछ सेवा करने के लिए बनाई गई हैं। शिवनंदन मिशिर ठाकुरों को समझाते हैं- 'ढोल गवार शुद्र पशु नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी।'

इस अमानवीय वचन का पालन रानी की सराय गाँव में किया जाता है। जोखू हलवाहा को दलित होने के कारण ठाकुर सरमुख सिंह उसके हाथ से पैना छीनकर पीटने लगते हैं। जातीयता के कारण केवल सर्वहारा समाज को ही प्रताड़ित नहीं किया जाता बल्कि पढ़े-लिखे मास्टर हुसैनी को भी रानी की सराय गाँव में ब्राह्मण के घर अँजुरी से पानी पीने को कहा जाता है। लोटे से अगर पानी मुसलमान पीता है तो वह लोटा भ्रष्ट होता है। गजाधर के पिता शिवनंदन मिशिर लोटा लपक कर हाथ में लेते हुए बोले- 'छिमा करो हुसैनी साहब, मिशिर, कुल्हड़ या काँच का गिलास नहीं है हमारे पास, सो अँजुरी से पी लीजिए।' 'क्योंकि लोटा छू जायेगा। हिंदू और उस पर भी ब्राह्मण हूँ।' ब्राह्मण और ठाकुरों की झूठी सनातनी शान ने इस रानी की सराय गाँव में आदमी-आदमी में भेद निर्माण किया है। जोखू तो ठाकुरों के डर से शहर में भाग गया था। गाँव में अब जोखू की पत्नी और बेटे को पापी मानकर तौहीन सहनी पड़ती है। पत्नी को सरमुख सिंह के घर गुलामी करनी पड़ती है तो बेटे सुरजू को गाँव भर के ढोरों की चरवाही करनी पड़ती है।

बच्चों में स्वांग चल रहा था तब सब ने अलग-अलग व्यक्तियों की भूमिकाएँ की थी। सुरजू मास्टर हुसैनी बनता है तब सरमुख सिंह का बेटा बृजबिहारी सुरजू का जातिगत अपमान करता है- "एक नीच और खूनी के बेटे को मास्टर बनाया किसने? जातीय संस्कार

बच्चों में भी होते हैं परिणामतः वे भी अपने सनातनी खून की झलक दिखाते हैं। रानी की सराय गाँव में वर्ण व्यवस्था के कर्म विभाजन का पालन बड़ी मुस्तैदी के साथ किया जाता है। अछूतों को हलवाही और ठटवारी ही करनी पड़ती है। अछूत पढ़ नहीं सकता उस पर अगर उसके बाप पर खूनी का ठप्पा लगा है तो क्या कहें/ सूरजू फिर भी ढ़ोर चराने की अपेक्षा पढ़ने की जिद करता है जब उसकी दयनीय माँ अपनी जाति और असहायता का बयान करती है- 'एक दागी बाप और दासी माँ का लड़का। कैसे पढ़ा सकती हूँ तुझे? कौन पढ़ने देगा तुझे, बोल। तुझे तो हलवाही और ठटवारी ही करनी है बेटे।' अछूत नारी और उसके बेटे पर गाँव जाति के कारण अन्याय अत्याचार करता है।

५.३ आदिवासी समाज के अन्य संकट और संजीव के उपन्यास

सर्वहारा के विरोध में भ्रष्ट व्यवस्था की मिलीभगत है। जिसका एकमात्र उद्देश्य है सर्वहारा को लूटना है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण ही तो हदबंदी के बावजूद जमींदारी जस-की-तस बनी हुई है और सर्वहारा समाज की जमीन भी लूटी जा रही है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण ही शोषकों को सर्वहारा समाज को लूटने और प्रताड़ित करने की छूट है। प्रशासन तंत्र की भ्रष्टता ने शोषण को बल दिया है। बॉटम से टॉप तक सिक्योरिटी से लेकर मंत्री तक सारे-के-सारे शोषक व्यवस्था के सहायक हैं। भ्रष्ट व्यवस्था के चलते जो लूट रहा है। वह लूट रहा है। जो

बिला रहा है। वह बिला रहा है। व्यवस्था सर्वहारा समाज पर हो रहे हर तरफ के शोषण का समर्थन करती है और शोषकों को बाइज्जत बरी भी करती है। वैध को अवैध और अवैध को वैध ठहराना इनके बाए हाथ का काम है।

सर्वहारा समाज की कब्र पर ही यह व्यवस्था फलती-फूलती है। इस व्यवस्था में भ्रष्ट पुलिस, अफसर, राजनीति, सूदखोर, दलाल, गुंडे, प्रबंधन, पूँजीपति, न्याय-व्यवस्था आदि को सम्मिलित कर सकते हैं। उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण के नाम पर सरकार की संपत्ति की नीलामी इसी वर्ग की साजिश है। औद्योगीकरण और विकास के नाम पर यही वर्ग आदिवासियों की साधन सामग्री को हथिया रहा है। सरकार आँखें मूंदकर सर्वहारा समाज के विकास पर पैसा खर्च करती है पर यह भ्रष्ट व्यवस्था अधिकतर पैसा स्वयं भ्रष्ट व्यवस्था के चलते ही अपनी नौकरी के अंतिम समय तक न प्रमोशन पा सके थे, न क्वार्टर। वे सर्वहारा समाज के शोषण के लिए भ्रष्ट व्यवस्था को जिम्मेदार बताते हैं जिसकी झलक हम उनके उपन्यासों में देख सकते हैं।

'किशनगढ़ के अहेरी' उपन्यास में भ्रष्ट व्यवस्था की पोल खोली गई है। भूदान की जमीन हथियाने के लिए व्यवस्था शोषकों को मदद करती है। नारियों का शोषण करना, बेगार लाना और न करने पर सर्वहारा समाज को पीटना आदि जुल्म शोषण भ्रष्ट

व्यवस्था की मदद के कारण करते हैं। सर्वहारा समाज स्वयं तो शोषकों से उत्पीड़ित है अगर वह शिकायत करता है तो उल्टे प्रशासन उसे ही प्रताड़ित करता है। इस भ्रष्ट व्यवस्था पर से सर्वहारा समाज का विश्वास उठ चुका है। जो शोषक व्यवस्था की समर्थक बनी है। शोषक अन्याय अत्याचार करके भी भ्रष्ट व्यवस्था की नजर में पाक है और सर्वहारा निरीह होते हुए भी पापी। जय डी•एस•एस•पी• को कहता है- "आपके विभाग ने तो हर वक्त उन्हीं की सहायता की। शिकायत करने वालों को उल्टे परेशान किया उसका पैसा, उसकी गुंडागर्दी, उसकी राजनैतिक पार्टी से आप उसके सामने सर तक नहीं उठा सके। जनता कानून को कब अपने हाथ में लेने पर मजबूर होती है जब उसे सरकार और उसके तंत्र पर यकीन उठ जाता है।" सीधे-सीधे भ्रष्ट यहाँ दलालों, सामंतो, धर्म के ठेकेदारों की पक्षधर बनी है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण सर्वहारा समाज की मेहनत का फल उन्हें नहीं मिलता तो दूसरे की हड़प लेते हैं। अन्न पैदा करने वाला ही भूखा और कपड़े बुनने वाला नंगा रहता है। भ्रष्ट व्यवस्था आरक्षण का विरोध करती है और ब्राह्मणवादी परंपरा का पोषण।

'सावधान! नीचे आग है' उपन्यास में चंदनपुर नरसंहार के लिए भ्रष्ट व्यवस्था जिम्मेदार है। जिनके हाथ में कानून और पावर है वह सर्वहारा समाज को लूट रहे हैं। सर्वहारा समाज भ्रष्ट व्यवस्था के चलते अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं के लिए तिल-तिल कर जल रहा है।

इनकी जिंदगी में शोषण के चलते एक सड़ांध-सी बू आती है। पुरुषों की अपेक्षा औरतों को काम दिया जाता है। व्यवस्थागत लूट के चलते सर्वहारा समाज रोजी-रोटी के लिए तरसता नजर आता है। मेवा कहता है- दलालों, सूदखोरों और गुंडों के बीच पिसते, कोयले की गर्द फाकते, चंदनपुर के खदान मजूर----- सच तो यह है कि जिनके हाथ में कानून और शक्ति है, सब चोर हैं। मेहनत ईमानदारी की कोई कदर नहीं। जो लूट रहा है, लूट रहा है, जो बिला रहा है, बिला रहा है----- यह समूचा इलाका ही बैठ जाएगा एक दिन जल-जलकर।" मेवा के इस कथन में सर्वहारा वेदना और व्यवस्थागत खीज को देखा जा सकता है। यहाँ काम मिलता नहीं अगर मिला भी हो तो उधारी में। पैसे के बदले शराब पिलाई जाती है या धौंस देकर भगाया जाता है। सर्वहारा को किसी-न-किसी गुंडे या सूदखोर के गुट में शिरकत करनी ही पड़ती है। श्रम और यौन शोषण करें तो किससे करें सारी भ्रष्ट व्यवस्था इसी कुचक्र में फँसी है।

आज कंपनी में हुनर का कोई मोल नहीं है। ठेकेदार और भ्रष्ट मजदूर संगठन के गुंडे अपने ही सगे-संबंधियों को जिले-जवार और जाति के लोगों को बुलवाकर भर्ती करते हैं। स्वयं का मजदूर संगठन बनाकर प्रबंधन से जायज-नाजायज काम करा लेते हैं। इन्हें लूटने के लिए शोषकों ने शराब की दुकानें खोली हैं। शिकायत करने पर इन्हें जानवरों की तरह पीटा जाता है। असल में खदान माफिया रूपी भ्रष्ट

व्यवस्था चलाती हैं। जिनकी सहायता मजदूर संगठन बनाकर प्रबंधन से जायज-नाजायज काम करा लेते हैं। भ्रष्ट व्यवस्था शून्य से शिखर तक अपना-अपना हुकुम चलाती हैं। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण सारी शान-शौकत शोषकों के पैरों की दासी बनी है। गरीब थापा की पत्नी भट्ट के साथ है। शराब और जुए के द्वारा कोलियरी को लूटा जा रहा है। अगर कोई अफसर घूस नहीं लेता तो उसे किसी समारोह में बुलाकर सम्मानित करके अपने अनुकूल बनाया जाता है।

सरकारी अस्पताल में सर्वहारा समाज के लिए दवा-दारू नहीं है। अस्पताल से इन्हें भगाया जाता है। अस्पताल की सारी दवा-दारू साहब, बाबू, सूदखोर और दलाल उड़ाते हैं। आदिवासियों को घरेलू इलाज का ही रास्ता अपनाना पड़ता है। डॉक्टर आदिवासियों का इलाज नहीं करते। बूढे काका चिकित्सा का हाल बताते हैं। "हमारे जैसे लोग खरविरैया के इलाज और झाड़-फूँक से अपनी तकदीर से अच्छे होते हैं। चोट लगे तो पेशाब कर दो, टेटनेस से बचै खातिर दाग दो, हल्दी, पियाज, चूना, मदार-धतूर यही इलाज है हमारा। डागडर लोग साहेबन, बाबुन और सुदखोरन, दलालन के खातिर हैं, हमारे लोगन खातिर नाय।" सरकारी दवा-दारू भी भ्रष्ट डागडर शोषकों पर उड़ाते हैं और मूल आदिवासी दवा-दारू के अभाव में जीते और मरते हैं।

अगर कोई मजदूर हादसे का शिकार हो जाता है, तो भ्रष्ट व्यवस्था मुआवजा या उसके परिवार के किसी सदस्य को नौकरी देना तो दूर उल्टे उसी पर शराब पीकर काम करने का इल्जाम लगाती है। हादसाग्रस्त मजदूर की ही गलती दिखाई जाती है। खदान में पानी भर जाने के कारण बचे हुए मजदूर राहत कार्य का इंतजार करते और व्यवस्था अंधे धृतराष्ट्र की तरह अनजान बनती है। खदान दुर्घटना में देहाती और सीधे-सादे मजदूर ही मारे गए हैं, जो भ्रष्ट व्यवस्था के नुमाइंदे थे वह किसी तरह बहाना बनाकर भाग निकले थे। हादसाग्रस्त परिवारों को अफसरों की पत्नियाँ फल बाँट रही हैं। देश-विदेश से आई सामग्री हादसाग्रस्त परिवारों तक पहुँची ही नहीं। लोकसभा में केवल हादसे से लेकर हंगामा खड़ा किया जाता है। आरोप-प्रत्यारोप झड़ रहे हैं।

जाँच कमीशन प्रबंधन की वफादार बन गई। जो एक हजार मजदूर मृत्यु के आंकड़े पर तीन सौ इक्यावन की मुहर लगा देती है। व्यवस्था के पिट्ठुओं की जगह पर काम करने वाले दुर्घटनाग्रस्त स्थानापन्न मजदूरों के नाम रजिस्टर से गायब हैं। आशीष के पीछे वारंट लगाया जाता है। सारे गवाह घूस लेकर या दबाव में अपने बयान बदल देते हैं। वर्ल्ड बैंक से सर्वहारा के लिए आया पैसा भ्रष्ट व्यवस्था चट कर जाती है। जो डायरियाँ आशीष के पास थी उसे श्री सिंह साजिश के तहत हथिया लेता है। डायरियों का सौदा करके जलाया जाता

है- "मगर आगे उसने यह लिखा है कि यह डॉक्यूमेंट श्री सिंह ने जमा नहीं किये बल्कि उन्हें लेकर मैनेजर या एरिया मैनेजर के पास गए। वहाँ श्री सिंह ने उनसे कहा कि आपकी जान मेरी मुट्ठी में है। अस्सी हजार डिमांड किया उन्होंने। आखिर सौदा चाहिए हजार पर पटा और वे कागजात जला दिये गए उनके सामने।" यहाँ तो काम करने का नाटक मात्र चल रहा है। कौन कितनी राहत सामग्री और पैसा हजम करता है इसमें स्पर्धा लगी हुई है। दामोदर के किनारे दयनीय मजदूरों की गुंडे, सूदखोर, प्रबंधन, मजदूर संगठन, अफसर आदि के द्वारा लूट चल रही है।

भ्रष्ट व्यवस्था के चलते गजाधर सिंह अपने नाम पर दूसरे मजदूर को खदान में उतारता है जो उसकी रखैल जैसा है। स्वयं मुआवजा पत्नी लेती है। वास्तव में जो सर्वहारा मजदूर मर गया उसकी मौत का मुआवजा भी उसकी पत्नी की अपेक्षा गजाधर के जिंदा होते हुए भी उसकी पत्नी को मिलता है। मृत सर्वहारा मजदूर की आत्मा की कराह गूंजती है- "तुम नहीं मरते। जैसे ही खड्ग उठता है, तुम किसी बलि के बकरे को आगे कर देते हो। व्यवस्था के लाडले हो तुम। वह हमे झांसा देने के लिए तुम्हें एक जगह से खारिज करती है और दूसरी जगह समस्या तस्लीम करती चलती है। भ्रष्ट व्यवस्था के चलते मृत मजदूरों के नाम रजिस्टर से गायब हैं। चंदनपुर खान प्लावन में गजाधर मरा ही नहीं। व्यवस्था गजाधर की रोती-बिलखती पत्नी को मुआवजा दिलाने के

लिए खाक छानती है। भ्रष्ट व्यवस्था के चलते आशीष को झूठे इल्जाम में फँसाया जाता है कि उसे सोमारु मिस्त्री के आश्रित के रूप में इलेक्ट्रिक फीटर की नौकरी हासिल की। उसके पीछे जाँच कमीशन का वारंट भी लगाया जाता है। सारी व्यवस्था आशीष के पीछे हाथ धोकर पड़ी है। नौ माह पूर्व तुमने आशीष कुमार के नाम से प्लावन दुर्घटना में मृत सोमारू मिस्त्री के आश्रित के रूप में इलेक्ट्रिक फीटर की नौकरी पाई है। तुम्हारे नाम जाँच कमीशन का वारंट है।" आशीष को फँसाने है तो फर्जी वेतन ड्रा भी बनाए गए है। छब्बीस दिसंबर के जल प्लावन से तो वह बच गया पर भ्रष्ट व्यवस्था उसे निकालने के लिए आमादा है। दुनिया का सबसे बड़े आपराधिक इलाकों में एक यह झरिया का इलाका कहा जा सकता है, अपराधियों का अभ्यारण्य है।

दामोदर के तट पर लाशों की सामूहिक की चिताएँ जलाई जाती हैं सारा कुछ साहबों के हाथ में है चाहे जितनी संख्या पर मुहर लगवाए। सर्वहारा आपस में बातें करते हुए भ्रष्ट साहबों की व्यवस्था का यथार्थ बोध कराते हैं। साहब जो करे वही फुल एंड फाइनल है। उनके सामने सर्वहारा की क्या बिसात। अगर बोड़सा होबे करे तो कौन भेद पा सकता है? भैया, डुबाने वाले साहब, लाश निकालने वाले साहब, हिसाब करने वाले साहब, जाँच करने वाले साहब। एकरा में हमरा-तोहरा के के पूछेगा।" मृतकों का आंकड़ा कम दिखाना भ्रष्ट व्यवस्था की

चाल है। भ्रष्ट व्यवस्था ने आशीष को बेहाल किया है जिसके पेट में अंगारे और पीठ पर हत्यारे-------! भ्रष्ट व्यवस्था ने हर काम में अपना कमीशन लेती है। कोयला, मुआवजा और राहत सामग्री में भी प्रत्येक के अपने-अपने हिस्से हैं।

अपनी अतृप्त यौंन पिपासा वश भ्रम में मुकीद की लाश को पत्नी समझकर पकड़ता है। अब एक तरफ यौन बुभुक्षा है, दूसरी और पेट की उधर बुभुक्षा। दोनों के बीच मरता हुआ मंगतू पेट की भूख को परे ठेलकर जैसे ही वह लाश का चुंबन लेता है, मुकींद के होंठ कट कर उसके मुँह में समा जाते हैं वह पशु की तरह चभर-चभर खाने लगता है। फिर अपराधबोध और घृणा के कारण आत्महत्या करता है। भूख और अपराध बोध के पाटे में पिस गया बेचारा वरना इतनी जल्दी तो नहीं ही --------। माफिया, सरदारों, यूनियन के भ्रष्ट दलालों, नेताओं, तस्करों, डकैतों, बलात्कारियों, खूनियों, अफसरों, मंत्रियों को अपराध-बोध नहीं कचोटता और वे निर्लज्ज भाव से सीना तानकर जीते हैं। काश कभी एक बार भी मंगतू की तरह उन्हें कोई कचोट होती, तो इस दुनिया का नक्शा ही कुछ और होता। भ्रष्ट व्यवस्था की बेशर्मी को यहाँ अभिव्यक्त किया गया है। मंगतू तो भूख के लिए घृणायुक्त काम करता है। भ्रष्ट व्यवस्था किसलिए पाप करती हैं?

देश के प्रतीक चिन्ह अशोक स्तंभ के विद्रूप, अशोक नहीं शोक चंदनपुर रूपी जंगल के तीन सिंह जो अन्य घोड़े, बैलों रूपी सर्वहारा समाज को अपना नरमचारा समझकर ताव मारते हैं। भ्रष्ट व्यवस्था और सर्वहारा समाज का सिंह और घोड़े, बैलों का साथ है। छेदी अशोक स्तंभ द्वारा भ्रष्ट व्यवस्था को समझाता है- "अपना सिक्का देखा है न भैया, उसमें तीन सिंह दिखलाई पड़ते हैं। 'हा'।" तो उन्हें समझ ले। ई तीन सिंह चंदनपुर के सिक्के के शोक स्तंभ है नीचे है शोक चक्र। मनीजर, चीफ माइनिंग, इंजीनियर आदि घोड़े और बैल में उसे।" यहाँ तीन भ्रष्ट सिंहों का वर्णन आया है। चौथा है बुझारत सिंह जिसे देखने के लिए नेपथ्य (दामोदर वाली भट्टी) में जाना पड़ेगा। सतह के नीचे सर्वहारा को प्राकृतिक विपदा से सावधान रहना है तो सतह के भ्रष्ट व्यवस्था के हिस्सेदार खदान मालिक, सूदखोर, दलाल, साहब, भ्रष्ट प्रबंधन, गुंडे, राजनेता आदि से।

'धार' उपन्यास में सौताल आदिवासियों के शोषण के लिए भ्रष्ट व्यवस्था जिम्मेदार है। भ्रष्ट व्यवस्था के चलते महेंद्र बाबू की तेजाब फैक्ट्री इस परिवेश को श्मशान बना रही है। यहाँ पानी तेजाब युक्त हो गया है। इससे सौताल दमे की बीमारी के शिकार हो गए है। पक्षी पलायन कर चुके हैं। और पेड़ पौधे तक बौने हो गए हैं। सिलतोड़ी के सामान में भ्रष्ट व्यवस्था की हिस्सेदारी होती है। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण

ही यहाँ के आदिवासियों को चोरी, सिलतोड़ी, भीख, रंडीगीरी का रास्ता अपनाकर पेट भरना पड़ता है। भ्रष्ट व्यवस्था इस्पात कारखानों को जाने वाले वैगनों से कोयला निकालकर ट्रकों से बाहर भेजने हैं और इस खनन क्षेत्र के घटिया कोयले को वैगनों में लादकर फिर से उन्हें जस-का-तस बना देते हैं। कोल माफिया का एक समूचा वर्ग भी यहाँ जुटा हुआ है। जिसके साथ भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था है ठेकेदार अब भी ढोर डांगरों की तरह उन्हें काम करने हांककर ले जाते हैं। और चूसकर छोड़ देते हैं। माफिया अब भी उनसे चोरी से कोयला कटवाते हैं। और पकड़े जाने पर सजा भी उन्ही को होती है। बड़े जोतदार अब भी खेती उनसे का अमानुषिक श्रम कराते हैं और जरा-सी बात पर पीटते हैं।" भ्रष्ट व्यवस्था के सारे अपराधी, गुंडे और दागी लोग प्रशासन और उद्योगों में घुसकर सर्वहारा को प्रताड़ित कर रहे हैं। भ्रष्ट व्यवस्था धार्मिक आडंबर का हौवा खड़ा करके आदिवासी चेतना को कुचलती है। शोषकों की पूरी भ्रष्ट व्यवस्था जनहित का भ्रम पैदा करती है जिसमें नेता, अफसर, माफिया, ठेकेदार, कारखाना दार हैं। जिनका असली मकसद सर्वहारा समाज की लूट करना है।

सहकारिता के परिपेक्ष में जनखदान का जन्म होता है। सर्वहारा की जनखदान के राष्ट्रीयकरण का प्रस्ताव ठुकरा कर भ्रष्ट व्यवस्था माफिया महेंद्र बाबू जैसों की अवैध कोयला खदान में संरक्षण देती है। सौताल आदिवासी अगर सिलतोड़ी का काम करना छोड़ना चाहते

तो उनका एनकाउंटर किया जाता है। भ्रष्ट व्यवस्था ने सौताल नारियों को अपनी हवस का शिकार बनाया है। भ्रष्ट व्यवस्था चोरों, जेबकतरों, गुंडों और बलात्कारियों के सारे इल्जाम आदिवासियों पर दर्ज करती है। अवैध कोयला खनन करते समय अन्य मजदूरों के साथ फोकल को भी खदान धंस जाने पर बाहर निकालने की अपेक्षा खदान में नमक डालकर महेंद्र बाबू और पंडित सीताराम गलाते हैं। जैसे फोकल ने नमक की शरीयत अदा की हो। इस इलाके की खोह, गुफा खोदने से लाशों के कंकाल निकलते हैं, जिन्हें भ्रष्ट व्यवस्था ने दफनाया था अपने फायदे के लिए। भ्रष्ट व्यवस्था जनखदान पर बुलडोजर चलाती है।

'पॉव तले की दूब' उपन्यास में भ्रष्ट व्यवस्था के कारण मेझिया के आदिवासी शापित जीवन जी रहे हैं। इनके शिक्षा और चिकित्सा की न प्लांट व्यवस्था करता है और न सरकार। पुलिस, ठेकेदार, जमींदार, प्रशासन और महाजनों के शोषण के कारण आज इन आदिवासियों पर विस्थापन की नौबत आ गई है। सरकार औद्योगीकरण के नाम पर इनकी जमीन का अधिग्रहण कर रही है और मुआवजा अफसरों के पेट में जा रहा है। आदिवासियों के हिस्से की नौकरियाँ दीकू उड़ा रहे हैं। भ्रष्ट व्यवस्था के कारण आदिवासी कंगाल बन गए हैं और दीकू सोने की धरती का दोहन कर रहे हैं। आदिवासी नवयुवक उत्तेजना में जंगल को आग लगाता है और जलने के पूर्व सुदीप्त को भ्रष्ट व्यवस्था का परिचय

कराता है- "मुझे मत रोकिए, सर!" फिलिप उत्तेजना में बुरी तरह हाँफ रहा था, 'ये जंगल हमारे होते तो इसे सुख्खू सिंह न कटवा पाते, न ही सरदार इसे बाहर भेज पाते। हमारे होते तो, रोकने पर पुलिस हमी को न पीटती। यह पूरा झारखंड इनका अभ्यारण्य है सर! अभ्यारण्य इन सालों का और हम इसकी खुराक।" आदिवासियों की जंगम संपत्ति को भ्रष्ट व्यवस्था उड़ा रही है और आदिवासी भोले जीवों की तरह जल मर रहे हैं। भ्रष्ट व्यवस्था यहाँ आदिवासियों का दमन और शोषण कर रही है। पूँजीपति और ठेकेदार झारखंड के मेझिया क्षेत्र की खनिज संपत्ती को लूट रहे हैं। कोयले के नाम पर भ्रष्ट व्यवस्था पत्थर और कचरे को भी स्वीकार करती है।

'आकाश चम्पा' उपन्यास वर्तमान समय के भ्रष्ट परिवेश का वर्णन करता है। दुर्गम इलाके में कुछ स्कूल, पुल और कर्मचारी तक कागज पर ही है। मोतीलाल जब सुखौती के फर्जी स्कूल के संदर्भ में जानते हैं तब झा अन्य क्षेत्रों की भ्रष्ट व्यवस्था का दर्शन कराते हैं- "अरे हम पूछते हैं कि अकेले सुखौती ही नहीं है न, न ही पालुन अकेले टीचर है। सैकड़ों स्कूल हैं, जहाँ टीचर नहीं है---------। अस्पताल है, जहाँ डॉक्टर नहीं दफ्तर है, जहाँ प्यून तक नहीं। जहाँ पचासों पुल है जो सिर्फ कागजों पर हैं। "जिस स्कूल पर मोतीलाल को यह सच्चाई प्रस्तुत करता है। भ्रष्ट स्कूल के प्रबंधन के कारण ईमानदार टीचर को

प्रताड़ित होना पड़ता है। न दैन्यं न पलायनम् के अनुसार जीते हुए मोतीलाल को भी भ्रष्ट व्यवस्था अपना शिकार बनाती है।

अधिकतर संस्था चालकों की भ्रष्ट नीति के चलते शिक्षा व्यवस्था भ्रष्ट हो गई है। डोनेशन लेना या शिक्षकों का वेतन काटना वे अपना अधिकार समझते हैं। शिक्षा के निजीकरण के कारण शिक्षा में भ्रष्टाचार बढ़ा। शिक्षकों का वेतन भी काटा जाता है निजी करण के कारण उन पर धौंस भी कसी जाती है। मुस्तफा कहते हैं- "पूरे पर साइन कर आधा वेतन भी यों देते हैं, मानो दया कर रहे हैं।" ज्ञान राजनीति और गुंडों की बदौलत किसी को भी पीट सकता है। झा फर्जी डिग्रियाँ बाटकर पैसा कमाता है। उसे जेल होती है पर भ्रष्ट व्यवस्था के आशीर्वाद से छूट भी दी जाती है। शिक्षा व्यवस्था का सरकार द्वारा जब तक अधिग्रहण नहीं किया जाएगा तब तक भ्रष्ट व्यवस्था गंदगी फैलाती रहेगी। भ्रष्ट झा के घर और किताबों की दुकान पर जब पुलिस छापा मारती है तो बोर्ड से लेकर परास्नातक की ढेरों मार्कशीट और सनदें बरामद होती हैं।

अध्याय - पांच

संदर्भ-

१- किशनगढ़ की अहेरी संजीव प्रकाशक मीनाक्षी पुस्तक मंदिर नई दिल्ली पृ• सं•- १९८, पृ• सं•-२१

२- वहीं पृ• सं•- २५

३- वहीं पृ• सं•- २६

४- सर्कस, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• ७/३१ अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली,प्रथम संस्करण-२००४,पृ• सं•-१५

५- वहीं पृ• सं•- १७

६- वहीं पृ• सं•- २८

७- वहीं पृ• सं•- ३३

८- वहीं पृ• सं•- ४७

९- वहीं पृ• सं•- ५९

१०- सावधान! नीचे आग है , संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण -२०१८, पृ• सं•-२३

११- धार, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण-२०११, पृ• सं•- ८३

१२- वहीं पृ• सं•- ९१

१३- वहीं पृ• सं•- ९८

१४- पॉव तले की दूब, संजीव, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, राजस्थान, प्र• सं•- १९९५ पृ• सं•- ३१

१५- जंगल जहाँ शुरू होता है, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-२०११, पृ• सं•- १०१

१६- वहीं पृ• सं•- ११९

१७- वहीं पृ• सं•- १२३

१८- सूत्रधार, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-२००४, पृ• सं•- ३७

१९- वहीं पृ• सं•- ४१

२०- वहीं पृ• सं•- ५७

२१- वहीं पृ• सं•- ७९

२२- किशनगढ़ की अहेरी, संजीव, प्रकाशक, मीनाक्षी पुस्तक मंदिर, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- १९८१, पृ• सं•- ८६

२३- वहीं पृ॰ सं॰- ९५

२४- वहीं पृ॰ सं॰- १११

२५- वहीं पृ॰ सं॰- ११९

२६- जंगल जहाँ शुरू होता है, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा॰ लि॰ अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-२०१०, पृ॰ सं॰- १२१

२७- वहीं पृ॰ सं॰- १०९

२८- सूत्रधार, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा॰ लि॰ अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-२००४, पृ॰ सं॰- ४३

२९- वहीं पृ॰ सं॰- ४७

३०- वहीं पृ॰ सं॰- ६६

३१- वहीं पृ॰ सं॰- ७३

३२- वहीं पृ॰ सं॰- ७७

३३- वहीं पृ॰ सं॰- ९४

३४- वहीं पृ॰ सं॰- ११३

३५- वहीं पृ॰ सं॰- १२१

३६- वहीं पृ॰ सं॰- १३७

३७- वहीं पृ• सं•- १४१

३८- आकाश चंपा, संजीव, रे माधव पब्लिकेशन्स, गाजियाबाद अब राजकमल प्रकाशन समूह में शामिल, प्रथम संस्करण २००८, पृ• सं•- २३

३९- वहीं पृ• सं•- ४८

४०- वहीं पृ• सं•- ७१

४१- वहीं पृ• सं•- ८३

४२- वहीं पृ• सं•- १०३

४३- रानी की सराय, संजीव, रे माधव पब्लिकेशन्स, गाजियाबाद अब राजकमल प्रकाशन समूह में शामिल, संस्करण २००९, पृ• सं•- २१

४४- वहीं पृ• सं•- २९

४५- वहीं पृ• सं•- ५१

४६- वहीं पृ• सं•- ७३

४७- किशनगढ़ की अहेरी, संजीव, प्रकाशक, मीनाक्षी पुस्तक मंदिर, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- १९८१, पृ• सं•- ४८

४८- सावधान! नीचे आग है , संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा• लि• अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण -२०१८, पृ• सं•-६१

४९- वहीं पृ॰ सं॰- ८३

५०- वहीं पृ॰ सं॰- ९७

५१- वहीं पृ॰ सं॰- १२१

५२- वहीं पृ॰ सं॰- ९९

५३- वहीं पृ॰ सं॰- १११

५४- वहीं पृ॰ सं॰- १२३

५५- वहीं पृ॰ सं॰- १३१

५६- धार, संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा॰ लि॰ अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण-२०११, पृ॰ सं॰- ३३

५७- पॉव तले की दूब, संजीव, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, राजस्थान, प्र॰ सं॰- १९९५ पृ॰ सं॰- २७

५८- आकाश चंपा, संजीव, रे माधव पब्लिकेशन्स, गाजियाबाद अब राजकमल प्रकाशन समूह में शामिल, प्रथम संस्करण २००८, पृ॰ सं॰- ६८

५९- - वहीं पृ॰ सं॰- १०७